इकाई 4 तन्त्र एवम् आगम में वास्तु

इकाई की रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 वास्तुशास्त्र एवं भारतीय संस्कृति

4.3.1 वास्तुशास्त्र के प्रधान आचार्य

4.3.2 वास्तुशास्त्र एवं पञ्चमहाभूत

4.3.3 तन्त्र एवम् आगम में वास्तुशास्त्र

4.4 सारांश

4.5 शब्दावली

4.6 बोध प्रश्न/अभ्यास प्रश्न

4.7 सहायक उपयोगी पुस्तकें

4.1 उद्देश्य

तन्त्र एवं आगाम में वास्तुशास्त्र के वर्णन से सम्बन्धित इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप :

- वास्तुशास्त्र एवं भारतीय संस्कृति के विषय में बता सकेंगे
- वास्तुशास्त्र के प्रधानाचार्य के विषय में भी बचा सकेंगे।
- पंचमहाभूत अका वास्तुशास्त्र में क्या स्थान है, यह भी उल्लेख कर सकेंगे ।
- तन्त्रके ग्रन्था में वास्तुशास्त्र की रूपरेखा को बता सकेंगे।
- आगम मे वास्तुशास्त्र की अवधारणा को स्पष्ट कर पाएंगे।

4.2 प्रस्तावना

तन्त्र एवं आगम ग्रन्थों में वास्तु विषयक ज्ञान के सम्बन्ध मे हम इस इकाई के माध्यम से जानने का प्रयास करेगें। चूंकि अठारह आचार्य वास्तुशास्त्र के हुए है। अठारह आचार्यों द्वारा अपने–अपने मतानुसार एवं अपने–शोध अनुसन्धान के अनुसार वास्तु से सम्बन्धित शास्त्र विषयक उल्लेख प्राप्त होते है। तन्त्र के ग्रन्थों में या आगम शास्त्र में केवल मन्त्र एवं तन्त्र का ही संग्रह नहीं है अपितु इन ग्रन्थों में मानव के कल्याणार्थ अनेकों उपायों का उल्लेख समाहित है। इसी विषयक आगम ग्रन्थों में वास्तुशास्त्र के विषय में जो वर्णन उपलब्ध है। वह इस प्रकार है आगम साहित्य के अन्तर्गत शैवागमों की 12 संख्या है। जिसमें ज्ञानपाद, योगपाद चर्यापाद तथा क्रियापाद है। क्रियापाद में वास्तुकला का उल्लेख प्राप्त हैं। इनमें से 62 अध्यायों का विषय वास्तुकला एवं मूर्तिरचना से सम्बन्धित है इस प्रकार से जन सामान्य इस ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित हो इस उद्देश्य के सन्दर्भगत इस इकाई में इम अध्ययन करेंगे।

4.3 वास्तुशास्त्र एवं भारतीय संस्कृति

भारतीय संस्कृति का पुरूषार्थ चतुष्टय से सीधा सम्बन्ध रहा है और हमारे ऋषियों का भी प्रमुख उद्देश्य था कि किस प्रकार से प्राणीमात्र का कल्याण किया जाये, और जीवन से मुक्ति प्राप्त हो क्योंकि संसार की सभी विद्यायें वह धर्मशास्त्र हो चाहे वह भिन्न–2 सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखने वाले अन्य शास्त्र हो लेकिन उनका प्रमुख उद्देश्य इस भौतिक जगत में सुख–समृद्धि एवं अभिवृद्धि को प्राप्त करवाना है इस उद्देश्य से यदि हम अपने ऋषियों मुनियों द्वारा रचित धर्मशास्त्र–पुराण इतिहास आदि का ठीक से अध्ययन करे तो अतिंम निर्णय मोक्ष की प्राप्ति के लिए मिलता है। परन्तु आधुनिक भौतिक जगत में इस सम्पूर्ण परिभाषा को परिवर्तित करके इसमें एक नया मोडला दिया है जिसके कारण आज प्राणि सबकुछ होते हुए भी दुःखी नजर आता है। क्योंकि इस सब का मूल कारण है कि आज लोगों ने धर्म ओर मोक्ष को छोड दिया है उनकी मानसिकता जो कि कल तक सकारात्मक रुप में थी आज नकारात्मकता में बदल चूकी है। आज वह केवलमात्र दो बिन्दुओं को लेकर ही अपने आप को सर्वसम्पन्न एवं सुखी मानता है जबकि ऐसा नहीं है वस्तुतः अर्थ की उत्पत्ति का प्रमुख उद्देश्य यहां पर काम की परिपूर्ती करना नहीं था वल्कि धर्म के द्वारा अर्थात् कि भी जीव को कायिक–वाचिक एवं मानसिक रूप से प्रताडित न करते हुए अर्थपूर्ण करना था न कि इन सभी के विपरीत अर्थोपार्जन करना। क्योंकि आज हमारा अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर हमारा मन–वचन एवं कर्म–: तीनों से मात्र अर्थ की प्राप्ति को करना रह गया है और अब हम इस प्रकार से अर्थ प्राप्ति करेंगे तो सम्भवतः हमारी सम्पत्ति है गृह जिसमें हम सारा दिन अपनी दैनिक दिनचर्या को करने के उपरान्त लौटते है लेकिन फिर भी निंद्रा एवं मानसिक संतुष्टि प्राप्त नही होती यह कैसे प्राप्त की जाये जिसमें वेदों का मुख्य उद्देदय था कि ''इष्ट प्राप्ति निष्ट परिहाराय च'' अर्थात् इष्ट की प्राप्ति हो और अनिष्ट का परिहार करना। अब इष्ट क्या है ? मन की इच्छाओं के अनुकूल सुख–साधनों की प्राप्ति करना ही इष्ट है। इसके विपरीत जो कुछ भी है वह अनिष्ट है। क्योंकि ''**मनोऽनुकुलं सुखम् मनः प्रतिकूलम दुखम्**'' मन की अनुकूलता प्रतिकूलता को दूर करने के लिए हमें एक घर की आवश्यकता रहती है वह घर यदि वास्तुशास्त्र के नियमों के अन्तर्गत बनाया जाये तभी मनुष्य को मानसिक शान्ति संभव है। वास्तु का अर्थ निवास से है। वास्तु शब्द की उत्पत्ति व्याकरण के ''**वस् निवासे**'' धातु से है जिसमें तुण् प्रत्यय करने पर वास्तु शब्द निष्पन्न होता है। जहां मनुष्य निवास करते है उसे वास्तु कहते है। इसके बहुत भेद हैं जैसे घर, मन्दिर, विद्यालय, ग्राम, नगर, बाजार, शहर इत्यादि सभी स्थान वास्तु के प्रतीक है। अतः सर्वप्रथम वास्तु में निवास के शुभाशुभ को जानना आवश्यक हैं क्योंकि शुभ वास्तु में निवास करने से धन–धान्य भाग्य एवं सुख–समृद्धि की वृद्धि होती है तथा इसके विपरीत यदि हम निवास करते है तो इन सभी का ह्रास होता है क्योंकि हमारे यहां ही नही वल्कि सम्पूर्ण विश्व की आदि रचित एवं प्राचीन पुस्तक वेद को माना गया है और इन्ही वेदो को मूल आधार बना कर शास्त्रों की रचना की गई है। और इस विषय से सभी अवगत हैं कि चार वेद है और इनके चार ही उपवेद है। जैसे ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद सामवेद का गान्धर्व वेद, और अथर्ववेद का स्थापत्यवेद। इन चारों वेदो एवं उपवेदों का अलग–अलग विधाओं से मनुष्य को सुख–समद्धि युक्त करना ही मुख्य उद्देश्य है। स्थापत्य वेद का सम्बन्ध सीधा यहां पर स्थापना से है वह है गृह निर्माणादि का निर्माण करना। ऋग्वेद में एक वर्णन में ऋषि प्रार्थना करता है एक **ऋचा में** कि है वास्तोष्पति। आप हमारे मन की भावनाओं को जानो। और रोग रहित होये, कृपया

सुख–समृद्धि एवं धन की हम आपसे कामना करते है उसे हमें प्रदान करें। आप हमारे दो पैर वाले चार पैरों वाले जीवों के लिए कल्याणप्रद हो।

अन्य दूसरी ऋचा में उल्लेख मिलता हि है वास्तोष्पते ! इस संसर रूपी नौका से तारने वाले हो, धन की वृद्धि करने वाले हो! हे सोम गायों एवं अश्वों से परिपूर्ण हो कर निरोगी होये। तेरा हमारा मित्रवत् व्यवहार हो! जिस प्रकार से पिता अपने पुत्रो की हर दृष्टि से लालन–पालन करता है ठीक उसी प्रकार से हमारी भी रक्षा करें।

हे वास्तोष्पति हम आपसे कामना करते है कि हमारे लिए अधिदैविक–आधिभौतिक–एवं आधिलौकिक तीनों प्रकार के सूखो से युक्त एवं रमणीय उत्तरोत्तर प्रगतिशील, आपकी सभा मे हमें स्थान प्राप्त हो। इसी प्रकार की सभा के (संसद) प्रतिभागी होयें। हमारे प्राप्त हुए धन की एवं अप्राप्य धन की सदैव रक्षा करें। क्योंकि विश्व बन्धुत्व की भावना से युक्त होकर हम सम्पूर्ण विश्व का कल्याण करें इस प्रकार के साधनों को हमारे लिए सुरक्षित रखें।

उपर्युक्त तीनों ऋचाओं का सीधा–2 अर्थ है कि हम लोगों की तीनों प्रकार के दुख, आदि दैविक, आदि भौतिक एवं आदि लौकिक इत्यादि सब ओर से हमारी रक्षा करें क्योंकि जिस प्रकार पिता अपने पुत्र की हर दृष्टि से लालन–पालन एवं दोषों को दूर करता हुआ गुणों की अभिवृद्धि करना चाहता है ठीक उसी प्रकार से आप भी हमारी सभी ओर से रक्षा करें लेकिन उपर्युक्त ऋचाओं के प्रारम्भ में वास्तोष्पति शब्द की पुनरावृति हुई है जिसका सीधा अर्थ है गृहस्वामि से अर्थात् हमारे ही परिवार के एक ऐसे सदस्य के लिए संकेत है जो घर में ज्येष्ठ है, घर–परिवार सम्बन्धियों एवं मित्र–शत्रु की गतिविधियों से अवगत है और इन सभी से प्राप्त होने वाले हितकर एवं अहितकर सभी प्रकार के गुण दोषों से परिचित है। लेकिन आज इससे विपरीत परिस्थिति होने के कारण ही आज लोग प्रायः दुःखी है क्योंकि आज हम अपने गृह के सबसे बडे सदस्य को वह आदर व सत्कार की भावना ही नहीं रखते क्योंकि वास्तोष्पति को ईश्वर का स्वरूप माना गया है। भारतीय संस्कृति में ''यत् पिण्डें तत् ब्रह्माण्डे'' की मात्र कोरी कल्पना नहीं है क्योंकि प्रति जीव में ईश्वर का वास है उसी ईश्वर का वह भी एक अंग है तो गृहपति ही वास्तोष्पति है।

अतः यदि हम आज अपने गृहपति की भावनाओं का आदर सत्कार नहीं करके उनके बनाये बये नियमों एवं आदेशों का उल्लंधन करेंगे तो कभी भी हमें सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती क्योंकि एक दिन उसी पिता को भी गृहपति बनना है और पुत्र को पिता। यह हमारे संस्कारों का एक उदाहरण है जो की मानसिक सुखों में सबसे बडी बाधा का कारण बनता है। भारतीय संस्कृति में देव पूजा का मुख्य रूप से परिचलन है यहां हर पिण्ड को देवता एवं ईश्वर का रूप माना गया है इस संस्कृति में साकार रूप से एवं निराकार रूप दोनों ही प्रकार से पूजा की जाती है। वैदिक संहिताओ के अनुसार वास्तोष्पति ईश्वर का ही एक रूप है क्योंकि वे इस सम्पूर्ण विश्व के स्वामि है यदि हम अठारह पुराण **आगम** एव निगमों का अध्ययन करें तो उसमें आरोह क्रम से वास्तुपुरुष एक उपदेवता है उससे उपर ब्रह्म विष्णु–रूद्र–इन्द्र–लोकपाल आदि सहित 45 देवताओं की स्थिति स्पष्ट होती है जो वास्तुपुरूष का कल्याण करते हैं। अग्नि, भविष्य, नारद, यत्स्यादि पुराणों में विशेष रूप से वास्तुविद्या का उल्लेख मिलता है लेकिन वास्तुपुरूष क्या है? उसका स्वरुप आकार प्रकार कैसा है इसका उल्लेख हमें मत्स्यपुराण में मिलता है।

4.3.1 वास्तुशास्त्र के प्रधान आचार्य

वास्तुशास्त्र की पृष्ठभूमि पर विचार किया जाए तो भारतीय संस्कृति एवं साहित्य में जो उल्लेख प्राप्त होते हैं उनके दृष्टि के अन्तर्गत भारतीय वास्तुशास्त्र का सम्बन्ध मानव की सृष्टि के आरम्भ काल से ही है। मानव का अवतरण ब्रह्मा द्वारा रचित इस सृष्टि का जब भी आज से लाखों वर्ष पूंर्व हुआ तब से लेकर वर्तमान युग तक मनुष्य सर्दी, गर्मी से बचाव हेतु अपने तन एवं मन को कैसे सुरक्षित रखा जाए इस उद्देश्य के साथ प्रारम्भिक काल में जगलों में झोपडीयों में तथा गुफाओं में अपना निवास बनाया होगा। शनैः–शनैः विकास के साथ–साथ जैसे–जैसे समय व्यतीत होता गया उसी के साथ–साथ मानव सृष्टि संरचना में वृद्धि होना, परिवारवाद का पनपना इन समस्त क्रियाओं के साथ मानव ने झोपड़ीयों और गुफाओं से निकलकर गृह निर्माण, पर्णकुटी, महल, बंगला, ग्राम, शहर, कस्बों का विकास के रूप में आज आप सभी देख रहे है। वास्तुशास्त्र के प्रारम्भिक काल के रूप में वेदों पुराणों एवं स्मृतियों के अध्ययन से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि वेदों से भी पहले तन्त्र एवं आगम शास्त्रों में भी वास्तुशास्त्र का वर्णन उपलब्ध होता है। मत–मतान्तरो के विषय में यदि इस विषयगत ध्यानाकर्षण किया जाए तो वैदिक कालीन संस्कृति से पूर्व कही तन्त्र एवं आगम का काल रहा होगा। परन्तु प्रामाणिक रूप में आज हमारे पास विश्व की सबसे प्राचीन पुस्तक वेद है जिसको भारतीयों ने ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व ने स्वीकार किया है। यदि हम वेद, तन्त्र तथा आगम एवं शैव शास्त्रों को छोड दे तो स्मृतियों में भी वास्तुशास्त्र विषयगत साहित्य प्राप्त होता है। जैसे महर्षि नारद रचित, नारद स्मृति, महर्षि पाराशर रचित पाराशर स्मृति, महर्षि मनुरचित मनुस्मृति इत्यादि वास्तुशास्त्र के अनेकों द्रष्टा ऋषि हुए हैं जिन्होंने वास्तुशास्त्र को ज्ञान और विज्ञान की कसौटी पर परखकर दिशागत एवं दशागत स्थिति के अनुसार शास्त्र का निर्माण किया है। वास्तुशास्त्र की वैज्ञानिकता की पृष्ठभूमि के आधार पर हमारे पास वेद, उपनिषद, तन्त्र, आगम, पुराण एवं स्मृतियां है जिनके आधारभूत सिद्धान्तों के अनुसार हम निरन्तर प्रगतिशील है आधुनिक परिप्रेक्ष्य में यदि वास्तुशास्त्र के विषय में विचार करें तो वास्तुशास्त्र का स्वरूप निरन्तर परिवर्तित होता जा रहा है जिसका सबसे बड़ा कारण शहरीकरण भी है। शहरीकरण के कारण आज के परिप्रेक्ष्य में लोगों के अन्दर एक होड़ लगी हुई है कि दिशा और दशा दोनों को ध्यान में न रखते हुए बहुमंजिला भवनो का निर्माण किया जा रहा है जिसका सबसे बड़ा दुष्परिणाम है आज सबसे बड़ा शारीरिक स्वास्थ एवं मानसिक चिन्तन में नकारात्मकता जिसके फलस्वरूप आज मानव के पास समस्त आधुनिक भौतिक सुख–सुविधायें होने के फलस्वरूप भी मानव परेशानी से जूझ रहा है। वास्तुशास्त्र के अठारह आचार्य हुए है जिन्होने शोध एवं अनुसन्धान करके शास्त्र का निर्माण किया और यह निष्कर्ष निकाला कि अमुक दिशा में निवास करने पर क्या प्रतिफल मिलने वाला है। विभिन्न वर्णों की मिट्टी का परीक्षण करके मिट्टी के वर्णनुगत मानव के वर्णानुसार सम्बन्ध स्थापित करते हुए उपयुक्त भूमि एवं नकारात्मकता, सूर्य एवं पृथ्वी की परिभ्रमणवशात् होने वाले स्थिति से पूर्व में ही ज्ञान की प्राप्ति हो इस विषयगत हमारे वास्तुशास्त्र के आचार्यों के विषय में भी भिन्न–भिन्न मत हैं। जिसमें मत्स्य पुराण की सूचि में वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक अठारह आचार्यों का नामोल्लेख मिलता है।

भृगुरत्रिवसिष्ठश्च विश्वकर्मा मयस्तथा।
नरदो नग्नजिच्चैव विशालाक्षः पुरन्दरः।।

ब्रह्मा कुमारो नन्दीशः शौनकोगर्ग एवं च।
वसुदेवोऽनिरूद्धश्च तथा शुक्रबृहस्पती।।

अर्थात् 1. भृगु 2. अत्रि 3. वसिष्ठ 4. विश्वकर्मा 5. मय 6. नारद 7. नग्नजित् 8. विशालाक्ष 9. पुरन्दर 10. ब्रह्मा 11. कुमार 12. नन्दीश 13. शौनक 14. गर्ग 15. वासुदेव 16. अनिरूद्ध 17. शुक्र 18. बृहस्पति ये अठारह वास्तुशास्त्रोपदेशक मत्स्यपुराण के अनुसार हुए हैं।

अग्निपुराण के अनुसार वास्तुशास्त्र के उपदेशकों की सूची इससे भी अधिक लम्बी है जिसमें पच्चीस आचार्यों के नामो का उल्लेख किया गया है।

जैसे –

व्यस्तानि मुनिभिर्लोके पञ्चविंशति संख्यया।
हयशीर्षं तन्त्रमाधं तन्त्रं त्रैलोक्यमोहनम्।।

वैभवं पौष्करं तन्त्रं प्रहलादं गार्ग्यगालवम्।
नारदीयं च सम्प्रश्ष्नं शाण्डिल्यं वैश्वकं तथा।।

सत्योक्तं शौनकं तन्त्रं वसिष्ठं ज्ञान सागरम्।
स्वायम्भुव कापिलञ्च ताक्ष्य नारायणीकम्।।

आत्रेयं नारसिंहारव्यमानन्दाख्यं तथारूणकम्।
बौधायन तथार्षं तु विश्वोक्तं तस्य सारतः।।

मानसार के अनुसार और भी लम्बी सूचि वास्तुशास्त्र के आचार्यों की उपलब्ध होती है। जिसके अनुसार वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य बत्तीस बताये गये हैं।

विश्वकर्मा च विश्वेशः विश्वसारः प्रबोधकः।
बृतश्चैव मयश्चैव त्वष्टा चैव मनुर्नलः।।

मानविन्मान कल्पश्च मानसारो बहुश्रुतः।
प्रष्टा च मानबोधश्च विश्वबोधो नयस्तथा।।

आदिसारो विशालाक्षः विश्वकाश्यय एव च।
वास्तुबोधो महातन्त्रो वास्तुविद्यापतिस्तथा।।

पाराशरीयकश्चैव कालयूपो महाऋषिः।
चैत्याख्यः चित्रकः आवर्यः साधकसारसहितः।।

भानुश्चेन्द्रश्च लोकज्ञः सौराख्यः शिल्पिक्तिमः।
ते एव ऋषयः प्रोक्ता द्वात्रिशंति संख्यया।।

1. विश्वकर्मा 2. विश्वेश 3. विश्वसार 4. प्रबोधक 5. मय 6. त्वष्टा 7. मनु 8. नल 9. मान 10. विन्मान 11. कल्प 12. मानसार 13. बहुश्रुत 14. प्रष्टा 15. मानबोध 16. विश्वबोध 17. नय 18. आदिसार 19. विशालाक्ष 20. विश्वकाश्यप 21. वास्तुबोध 22. महातन्त्र 23. वास्तुविद्यापति 24. पाराशर 25. कालयूप 26. चैत्य 27. चित्रक 28.

वास्तुविद्यापति 29. साधक 30. भानु 31. सौर 32. शिल्पि ये मानसार के अनुसार बत्तीस आचार्य वास्तुशास्त्रों पदेशक है।

विश्वकर्मा प्रकाश के अनुसार वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों के विषय में संक्षिप्त उल्लेख प्राप्त होता है।

इति प्रोक्तं वास्तुशास्त्रं गर्गायधीमते।
गर्गात्पराशरः प्राप्तस्तस्मात्प्राप्तो वृहद्रथः।।

वृहद्रथाद्विश्वकर्मा प्राप्तवान वास्तुशास्त्रकम्।
स एव विश्वकर्मा जगतो हितायाकथयत्पुनः।।

इस प्रकार से विश्वकर्मा प्रकाश में उल्लिखित नामों के अनुसार गर्ग, पाराशर, वृहद्रथ तथा विश्वकर्मा ये वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य हुए हैं।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यदि विस्तृत रूप से विवेचन करें तो वास्तविक रूप से गर्ग, पाराशर, वृहद्रथ तथा विश्वकर्मा ही वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक आचार्य माने गये है। अग्निपुराण एवं मानसार की सूचियां काल्पनिक प्रतीत होती हैं। जिनमें पुनरूक्ति दोष की भी अभिव्यक्ति होती है। मत्स्यपुराण में उल्लिखित अठारह आचार्य ही वास्तविक रूप से वास्तुशास्त्रोपदेशक है। परन्तु विभिन्न शास्त्रों में अग्निपुराण एवं मानसार आचार्यों का उल्लेख प्राप्त होता है जिसके कारण वास्तुशास्त्र ज्ञान के पिपासु भ्रमित न हो इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए उपर्युक्त का उल्लेख करना भी परमावश्यक होगा।

4.3.2 वास्तुशास्त्र एवं पञ्चमहाभूत

यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्ड में प्रमुख पांच तत्व है पृथ्वी, आकाश, जल, वायु, तेज(अग्नि) और इन्ही पांचो तत्वो के निर्माण से सृष्टि की उत्पति हुई हैं अतः इन्ही पांचो तत्वो को यदि विपरीत स्थिति में स्थापित कर देगें तो **अवश्यमेव** गम्भीर समस्याओं से ग्रसित होना पडेगा। जैसे जल के स्थान पर अग्नि और अग्नि के स्थान पर वायु को रखेंगे। क्योंकि ये सभी तत्व आपस में शत्रु हैं उसी प्रकार से गृह निर्माण में भी इन्ही तत्वों की अहम भूमिका रहती है। अतः यदि हम इस पंचभूतात्मक सृष्टि के अनुसार गृह निर्माण में पांचो तत्वों का **विनिवेश** करें तो अवश्य मेव सुख–सौभाग्य–समृद्धि की अभिवृद्धि, रोग–शोक आधि–व्याधि से रहित होकर अपने जीवन में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। पञ्चमहाभूतों में आधार स्वरूप एवं आश्रय स्वरूप केवल पृथ्वी ही है यही पृथ्वी संसार के समस्त जड़ चेतन एवं जीवों को आश्रय स्वरूप हमारी माता है। समस्त विश्व को धारण करने के कारण इसको आधार शक्ति भी कहा है। पञ्चभूतात्मक इस शरीर में अधिकांश पृथ्वी तत्व का ही समावेश है। पृथ्वी तत्व के उपरान्त शरीर रचना में जल,तेज, वायु तथा आकाश का अंश उत्तरोत्तर कम होता जाता है। आवास की दृष्टि से यदि गम्भीरतापूर्वक विचार करे तो यह पञ्चमहाभूतों मे क्रम इसी प्रकार से पाया जाता है। भवन निर्माण सबसे अधिकभाग भूतत्व का उससे कम जल तत्व का भाग और उससे कम तेज तत्व का योगदान रहता है। यही स्थिति सम्भवतः इस पञ्चभूतात्मक शरीर संरचना में रहती है। इसलिए तो भारतीय दार्शनिकों का **"यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे"** का सिद्धान्त पुष्टि करता है। इसी पृथ्वी को भूदेवी, श्रीदेवी, चिन्मयी भी कहते है। चिन्मयी देवी इस स्थूल पृथ्वी की अधिष्ठात्री है। अथर्ववेद के

पृथ्वी सूक्त में इसके आधिभौतिक एवं आधिदौविक दोनो स्वरूपों की स्तुति की गई है। तथा।–

भूम्यां देवेभ्यो ददति यज्ञं हव्यमरं कृतम्, भूम्यां मनुष्या जीवन्ति।
स्वधयान्नेन मर्त्याः। सा नो प्राणमायुर्ददातु, जरदष्टिं या पृथिवीकृणोतु।।

जैसा कि उपर्युक्त में ऋषि को भूमि माता के सदृश दृष्टिगोचर होती है। इसलिए इन्होंने भक्ति एवं श्रद्धा पूर्वक भूमि का गुणगान किया है भूदेवी अपने सेवक के लिए साक्षात् मां के रूप में स्थित हो जाती है। यही कारण है कि मानव का **"पृथ्वी से नैसर्गिक एवं भावनात्मक सम्बन्ध है"** वेद में ऋषि का कथन है –

"माता भूमिः पृत्रोऽहं पृथिव्याः"

जल– पृथ्वी तत्व के बाद उत्तरोत्तर कमी के क्रम में जल तत्व का स्थान आता है। प्रायः ऐसी उक्तियां जनसामान्य सम्पूर्ण विश्व के जीव एवं जन्तु तथा वनस्पतियों के लिए जल का महत्वपूर्ण स्थान है। **"जल है तो कल है"** प्राणधारियों के शरीर में 80 प्रतिशत मात्रा जल की होती है। जबकि वनस्पति में यह मात्रा कहीं अधिक पायी जाती है। भूमि के लगभग दो तिहाई भाग में जल पाया जाता है जो सागरों, नदियो झीलों, जलाशयों एवं कुओं के रूप में स्थित है। इसलिए भवन निर्माण के लिए एवं भवनवासियों के लिए जल की सुविधा उचित मात्रा में हो इस हेतु से बोरिंग, नलकूप, कुँआ, भूमिगत जलस्थान, ओवरहैड टंकी, एवं सममान्य नल आदि से जल की आपूर्ति एवं भण्डारण क निविध संसाधनों की उचित व्यवस्था का विचार इस शास्त्र के द्वारा किया जाता है।

तेज– भूमि तत्व एवं जल तत्व के उपरान्त भूमि भवन एवं शरीर की गतिविधियों को सुचारू रूप से संचालित करने के हेतु से तेज तत्व की अहम प्रधानता है। तेज तत्व के बिना प्राणी जगत हो या वनस्पति जगत दोनों का ही जीवन अधूरा है। वास्तव में प्राणधारियों में जो चेतना विद्यमान है वही प्राण है। तथा **"अग्निर्वै प्राण"** अर्थात् अग्नि ही प्राण है। अग्नि के विषय में बारंबार वेदों में अमृत कहा गया है यह अमृततत्व ही प्राण है। अग्नि ही वह अमृतदेव है जो मर्त्य भूतों में समाविष्ट है। **"इदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु"** अर्थात् अग्नि मर्त्यभूतों में अमृतज्योति है। इसलिए यही जीवन है। इस भौतिक शरीर में जब तक तेज है तब तक प्राणधारियों की सत्ता है। तेज के समाप्त होते ही शरीर की सत्ता समाप्त हो जाती है। इन पञ्चमहाभूतों से निर्मित शरीर बिना प्राण के अस्थियों का पिञ्जर विद्यमान है यह तेज ही तत्व है जो क्षेत्रज्ञ प्रजापति के रूप में विद्यमान हो जीवित रखता है। तेज तत्व का मुख्य स्रोत सूर्य है। इसलिए सूर्य को जगत की आत्मा के रूप में सूर्य को स्थापित किया गया है। वेद में वचन है –

ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरूणस्याग्नेः।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष ँ् सूर्य आत्मा जगतस्तस्धुषश्च।।

भवन निर्माण करते समय सूर्य के प्रकाश, ताप, उष्मा तथा ऊर्जा की सम्यक् प्राप्ति को ध्यान में रखते हुए भूखण्ड की स्थिति के विचार के साथ–साथ द्वारस्थापन, बरामदा, रसोईधर, खिड़कियों झरोखों तथा खुलेस्थान का विचार करते हुए अग्नितत्व की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। अतः भवन निर्माण में अग्नि तत्व से सम्बन्धित समस्त उपकरणों की स्थापना आग्नेय कोण में ही की जानी चाहिए यह वैज्ञानिक आधार भी है और यही शास्त्रीय निर्देश भी प्राप्त होता है।

वायुतत्व– चतुर्थ तत्व पञ्चमहाभूतों में प्रधानरूप से कार्य करने वाला है। वायु तत्व अध्यात्मिक देव वायुदेव है। जीव जगत में वायुतत्व का महत्व अत्यधिक है। प्राणधारी जीव भोजन के बिना एक से दो माह जल के बिना भी योगादि क्रियाओं के माध्यम से एक से दो माह तक जीवित रह सकता है। परन्तु वायु के बिना तो वह पांच मिनट भी नहीं रह सकता है इसलिए वायु तत्व का गृहनिर्माण में समुचित स्थान वास्तुशास्त्रीय सिद्धान्तों के अनुरूप यदि होगा तो देहधारियों के लिए वायु मिलती रहेगी। स्वस्थता के सिद्धान्त पर कार्य करता रहेगा विज्ञान के अनुसार पृथ्वी के चारों ओर एक गैसीय पदार्थ का आवरण है जिसे वायुमण्डल कहते है। विभिन्न गैसों तथा तत्वों से युक्त यह वायुमण्डल पृथ्वी के चारों ओर लगभग 3200 कि0मी0 से भी अधिक मोटी परत के रूप में विद्यमान है। पृथ्वी वायुमण्डल की इस परत को गुरूत्वाकर्षण के कारण धारण किये हुए है। श्रुतियों में वायुमण्डल के मेल से वराह का नाम दिया गया है। वराह का अर्थ है **"वृ"** धातु पूर्वक **"अह"** के मेल से वराह शब्द का निर्माण हुआ है। इसका शब्दिक अर्थ हैं कि चारों ओर की वायु पृथ्वी पिण्ड को घर लेती है अथवा आवरण किये हुए है पृथ्वी पर जलचर, नभचर, स्थलचर, अपितु पेड़–पौधे व वनस्पति जगत भी वायु के सहारे ही जीवित रहते हैं। यदि पृथ्वी वायुविहीन होती तो पृथ्वी पर न बादल होते न वर्षा होती न झरने, नदियां, सागर होते। वायुवेग से ही इनका सत्त प्रवाह है। वायुमण्डल में अनेकं प्रकार की गैसों का समिश्रण है इन्ही गैसों में कुछ जीवनदायिनी है और कुछ विषदायिनी है। सृष्टि का अपना क्रम है। वायुमण्डल में ओजोन गैस पाई जाती है। जिसकी ऊपरी परत सूर्य की पराबैंगनी किरणों को सोख लेती है। जिसके कारण पृथ्वी पर पडने वाले भयंकर ताप से जीवन की रक्षा होती है। वास्तुशास्त्र के सिद्धान्तों में भवन निर्माण के लिए विशुद्ध वायु के समुचित आवागमन के लिए भूखण्ड के आस–पास के वातावरण, खुलीजगह, खिडकियां, दरवाजे तथा भवन की छत के साथ–साथ विशुद्ध वायु की प्राप्ति हेतु पर्यावरण की दृष्टि से वृक्षारोपण का विचार किया गया है जिससे भवनवासियों को वायु का शुद्ध और सन्तुलित लाभ मिल सके।

आकाश तत्व – पूर्वोक्त चारों तत्वों में उत्तरोत्तर क्रम में कमी हो सकती है। परन्तु जैसे–जैसे मानव जीवन के विषय में विचार करें वैसे–वैसे जीवनरक्षा के हेतु से प्रत्येक तत्व अहम् योगदान रखता है । इसलिए जीवन रक्षा के क्रम में एक भी तत्व का अभाव जीवन को अस्वस्थता एवं जीवन को काल के ग्रास की ओर ले जा सकता है। अतः चारों महातत्वों का आपने आप में व्याप्त करने रहने वाले आकाश तत्व का अपना विशेष महत्व है। आकाशतत्व स्वयं स्थान नहीं लेता अपितु समस्त चार महाभूतों के साथ–साथ समस्त भूखण्ड, ग्रह पिण्डादि आकाशस्थ पिण्डों को अपने में स्थान दिये हुए है। चारों महाभूतो में पृथ्वी के समस्त अणु, परमाणु, जीव जगत, वनस्पति जगत, इसी क्रम में पार्थिव परमाणुओं द्वारा निर्मित लोक–लोकान्तर समस्त पिण्ड आकाश में स्थित है। तेजोमय पिण्ड सूर्यादि समस्त ग्रह, असंख्य तारागणों के समूह, अग्नि, विकार यहां पर प्रयोजन सिद्ध करने वाले समस्त उपकरण चाहे वह दीपक हो या चूल्हा, भट्टी इत्यादि ही क्यों न हो ,सभी को आकाश ने स्थान प्रदान किया है। इसी प्राकर वायु वेग आंधी तूफान इत्यादि समस्त जड़–चेतनादि द्रव्य आकाश में ही **विद्यमान** हैं। इस सफल ब्रह्माण्ड मे आकाश के कारण ही पृथ्वी, जल तेज तथा वायु कभी एक साथ इकट्ठे नहीं होते चूंकि यदि कभी–कभार ग्रीष्म ऋतु के आगमन पर दृष्टिगोचर होता है। कि तेज तत्व एवं वायु जब आपस कई जगह एक धूल का गुब्बारा बनाकर सामान्य जन को उस चक्राकार गुब्बारे के माध्यम से तीव्रगति से घुमाव के कारण भय पैदा कर देते हैं। इसलिए चारों तत्व यदि आकाश में समाहित हो जायेंगे उसका परिणाम क्या होने वाला है स्वतः ही आप जान सकते है। जब कभी सृष्टि के आरम्भ काल में यह चारों तत्व पृथ्वी जल तेज और वायु आकाश में स्वर्णमय

मण्डल रूप अवस्थित थे , तब ईश्वरीय इच्छा के अनुरूप सृष्टि रचना के उद्देश्य से उसी स्वर्ग रूपी मार्तण्ड से प्रत्येक पिण्ड अलग हुआ और पञ्चमहाभूतों की उत्पति हुई। आज सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में दृश्य रूप में स्थित समस्त जड़ चेतन प्राणी जगत, जीवजगत, वनस्पति जगत, ग्रह, नक्षत्र, सितारे सूर्यादि असंख्य पिण्ड इसी आकाश के गर्भ में पल्लवित हो रहे हैं। जिस प्रकार से जीव–जगत, या जड़ अथवा चेतनशील वनस्पतियों को अपने को पल्लवित एवं पुष्पित होने के लिए खुला स्थान चाहिए ठीक इसी प्रकार से भवन के मध्य एवं बाहरी परिवेश में भी यदि खुला स्थान रहेगा तो स्वतः शारीरिक एवं मानसिक विकास, स्वस्थ मन एवं मस्तिष्क की स्थिति का वातावरण रहेगा । जिससे प्राणीजगत स्वछन्द एवं स्वतन्त्र विचार धारा के साथ समस्त कल्याणकारी कियायें प्रतिकियायें करने में सक्षम हो पायेगा।

4.3.3 तन्त्र एवम् आगम में वास्तुशास्त्र

वास्तु के निर्माण सम्बन्धी सिद्धान्तों एवं प्रविधियों का ज्ञान अनेक प्रकार के ग्रन्थों में प्राप्त होता है। जैसे अथर्ववेद, शुल्वसूत्र साहित्य, कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र, शुक्रचार्य रचित शुक्रनीति, नाटयशास्त्र, नाट्यप्रतिपादक ग्रंथ एवं पुराण एवं भुक्ति एवं मुक्ति प्रदान करने वाले आगम ग्रंथ। इन ग्रन्थों में वास्तुशास्त्रीय सिद्धान्तपरक वास्तु से सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध हो जाती है। परन्तु इनके अतिरिक्त भी वास्तुकला से सम्बन्धित तीन प्राचीन परम्परायें प्रायः लोक में प्रचलित हैं।

जिनमें 1. शैव 2. ब्रह्मा 3. मय हैं। यहां पर विशेष ध्यान देने योग्य विषय है कि इन परम्पराओं का उल्लेख जिस कालखण्ड में लिखा गया, जिस कालखण्ड में ये परम्परायें परस्पर इतनी प्रभावित हो चुकी थी कि उनके परस्पर भेदो के विशेष लक्षण प्रायः समाप्त हो चुके थे। इन्ही परम्पराओं को आधार बनाकर अठारह आचार्यों द्वारा अपने–अपने मत–मतान्तरानुसार इस विशाल वास्तुशास्त्र रूपी साहित्य की रचना की गई थी। सर्वविदित है कि शुक्रनीति में शुक्रचार्य द्वारा नीतियों के विषय में चर्चा परिचर्चा का विषय समाहित है। ठीक उसी प्रकार से कौटिल्य का अर्थशास्त्र में अर्थशास्त्र से सम्बन्धित विधाओं एवं नीतियों का उल्लेख समाहित है! परन्तु प्रमुख विषय से इतर यह भी आवश्यक है कि जहां अर्थशास्त्र की चर्चा परिचर्चा होगी वहां पर आवास से सम्बन्धित भी विषय की चर्चा हो सकती है, ठीक इसी प्रकार से कौटिल्य के अर्थशास्त्र एवं शुक्रचार्य प्रणीत शुक्रनीति ग्रन्थों में कुछ ऐसे विषय उपलब्ध होते हैं जिसमें वास्तुशास्त्रीय विषयगत ज्ञान समाहित है। इसलिए प्राचीन साहित्य में कहीं न कहीं वास्तुविषयगत चर्चा सभी ग्रन्थों में उपलब्ध है। अतः वास्तुकला से सम्बन्धित जो सामग्री इन ग्रन्थों में वर्णित है उसका अपना ऐतिहासिक महत्व है। इतिहासकारों के अनुसार ईसा पूर्व 322 में चन्द्रगुप्त ने चाणक्य की सहायता से नन्दवंश को पराजित किया था। आचार्य शुक्राचार्य द्वारा रचित शुक्रनीति में देवमन्दिर एवं राजप्रासाद के समानान्तर–अन्य प्रकार के भवनों का निर्माण कला एवं उनकी विभिन्न विधियों नियमों एवं उपनियमों का उल्लेख प्राप्त होता है। इनमें दुर्गों जिनका प्रयोग कभी उस कालखण्ड में नगरों की रक्षा के निमित्त निर्माण किया जाता था यहां तक कि दुर्गों की निर्माण प्रक्रिया में जिस सामग्री का प्रयोग किया जाता था उसके विषय में भी विस्तृत उल्लेख प्राप्त होता है। चाणक्य के काल में वास्तुशास्त्र ने अपना विशिष्ट स्थान प्राप्त कर लिया था। वास्तुकला के कुशल एवं योग्य वैज्ञानिकों का वर्णन इन्होने स्वरचित अर्थशास्त्र ग्रन्थ के इक्कीसवें अध्याय में किया है। कौटिल्य ने इस ग्रंथ में एक राज्य में भूमि विभाजन के प्रकार की रूपरेखा का वर्णन किया है। भिन्न–भिन्न प्रकार के भवनों का निर्माण की प्रक्रिया एवं निवेश की प्रस्तुति के

साथ–साथ ग्राम का निर्माण में निवेश करना इस तकनीक को एवं पुर अर्थात् नगर निर्माण एवं निवेश के विविध नियमों विधियों एवं उपविधियों का विस्तृत उल्लेख प्राप्त होता है। इसी क्रम में आगम ग्रन्थों में अध्ययन से पता चलता है कि भारतीय संस्कृति में सम्पन्न एवं समृद्ध संस्कृति हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो को जाना जाता रहा है। पुरातत्व विभाग द्वारा प्राप्त अवशेषों से स्पष्ट होता है कि समृद्ध एवं वास्तु विधानुसार निर्मित संस्कृति भारतवर्ष में ही पनपी है जिसका आज समस्त विश्व उद्धारण प्रस्तुत करता है। इन पुरातत्व अवशेषों से यह सिद्ध होता है कि शैवागम एवं वास्तुकला का परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध रहा होगा। शैवागमों की संख्या 92 है। समानरूप से एक आगम में चार पाद अथवा चारभाग होते है। ऐसा भी कहा जा सकता है जिनमें 1. ज्ञानपाद 2. योगपाद 3. चर्यापाद 4. क्रियापाद है। इस प्रकार से 92 शैवागमों में 368 भाग या पाद होगें। प्रत्येग आगम में चार जो भेद है, इन चारों में तत्तद विषयक ज्ञान–विज्ञान प्रत्येक पाद में उल्लिखित है। उपर्युक्त चारों पादों में क्रियापाद में वास्तुविषयक ज्ञान–विज्ञान के विषय में विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए कामिका आगम में कुल 75 अध्याय हैं इनमें 75 अध्यायों में 13 अध्यायों को छोड़कर शेष 62 अध्यायों में वास्तुकला से सम्बन्धित समस्त जानकारी जिसमें नगर एवं ग्राम राजमहल एवं पर्णकुटी तक के विषय का विधिवत उल्लेख प्राप्त होता है।

करणागम में तृतीय अध्याय से लेकर के छः अध्यायों तक वास्तुकला के सिद्धान्तों एवं प्रविधियो का उल्लेख प्राप्त होता है। इसी क्रम में सुप्रभेदागम में लगभग 15 अध्यायों में वास्तुकला एवं मूर्तिकला के विषय में विस्तृत उल्लेख प्राप्त होता है। महर्षि काश्यप रचित अंशुमदभेद वास्तुकला एवं मूर्तिकला से सम्बन्धित ग्रंथ है। ऐसा प्रतीत होता है कि शैव सम्प्रदाय में द्वैतशैव के प्रतिपादक अंशुमान आगम में लिखित वास्तुविद्या विषयक लिखित सामग्री को प्राचीन सामग्री के आधार पर इस ग्रन्थ की रचना की गई होगी।

4.4 सारांश

सर्वप्रथम तन्त्र एवं आगम शास्त्र के विषय को जानना तथा आगम कालखण्ड में वास्तुविद्या, मूर्तिकला तथा स्थापत्यकला का कितना प्रभाव था क्या उस कालखण्ड में भी वास्तुविद्या का प्रयोग किया जाता रहा होगा। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में आज समस्त जनसमुदाय वास्तुविद्या का प्रचार–प्रसार एवं न समुदाय का शास्त्र के प्रति आकर्षण की स्थिति बनी हुई है। क्या उस कालखण्ड मे भी वास्तुविद्या का प्रचार–प्रसार एवं प्रचलन रहा होगा इस उद्देश्य के साथ इस इकाई का लेखन कार्य किया जाना तय हुआ है। प्रस्तावना मे प्रस्तावित विषय जिनके विषय मे विस्तृत चर्चा होनी है। जैसे कि भारतीय संस्कृति एवं वास्तुशास्त्र चूंकि संस्कारों से संस्कृति का उद्गम होता है। इसलिए सृष्ट्यारम्भ काल से वर्तमान काल पर्यन्त ग्राम, नगर, शहर, कस्बे, राजमहल, देवालय, दुर्ग किले, जलाशय, तालाब, पर्णकुटी आदि का निर्माण प्राचीन काल से वर्तमान काल तक अनवरत प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रगति के पथ पर अग्रसर है इन समस्त विषयों का वर्णन वास्तुशास्त्र एवं भारतीय संस्कृति वाले भाग में किया गया है। वास्तुशास्त्र के अठारह आचार्यों का उल्लेख प्राप्त होता है जिसमें विभिन्न मत–मतान्तर है। इन मत–मतान्तरो के मध्य प्रमाणित रूप से यह दर्शाया गया है कि जो अठारह आचार्यों के इतर बत्तीस आचार्यों के विषय में तथा पच्चीस आचार्यों के विषय में उल्लेख प्राप्त होता है ये समस्त उद्धरण काल्पनिक है । केवल अठारह आचार्यों के

विषय में जो उल्लेख प्राप्त होता है वही वास्तविक वास्तुशास्त्र के प्रवर्तक है । इसलिए प्रत्येक आचार्यों के द्वारा अपनी–आपनी बुद्धि विवेक के द्वारा भूमि, भवन, दिशा एवं दशा के विषय में विस्तार से उल्लेख किया गया है भारतीय दार्शनिक मतानुसार **"यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे"** के आधार वाक्य की सार्थकता यही पञ्चमहाभूत सिद्ध करते हैं। पञ्चमहाभूतों का योगदान जिस प्रकार से शारीरिक विकासक्रम में रहता है ठीक इसी प्रकार से ब्रह्माण्ड की स्थिति है। जिस प्रकार से उत्तरोत्तर क्रम से पञ्चमहाभूतों का क्रम शरीर संरचना में रहता है। ठीक उसी प्रकार से गृहनिर्माण में भी इन पञ्चमहाभूतों का योगदान यदि रहेगा तो उन गृहवासीयों के लिए सर्वविध सुख–सौविध्यं आरोग्यता बनी रहेगी शरीर संरचना में पृथ्वी से न्युण जल, तेज, वायु, चारों तत्वों का समूह आकाश में स्थित है। इसलिए गृह निर्माण में सबसे ज़्यादा पृथ्वी तत्व का समावेश होता है और उससे कम जल तत्व का और उससे कम तेज और उससे काम वायु का समावेश हो और अधिक से अधिक गवाक्षों का उपयोग एवं खिड़कियों और दरवाजों का नियत वास्तुसम्मत स्थान पर करने से निश्चित रूप से पञ्चमहाभूतात्मक युक्त गृहनिर्माण किये गये आवास पर निवास करने पर सुख–शान्ति, समृद्धि एवं भाग्य की अभिवृद्धि होगी। तन्त्र एवं आगम मे वास्तुशास्त्र के विषय में उल्लेख प्राप्त होता है जिसमें शैवागमों की संख्या बानवे है। प्रत्येक आगम के चार पाद या चार भाग है। जिसमें क्रमशः, ज्ञानपाद, योगपाद, चर्यापाद तथा क्रिया पाद है। पाद क्रिया में वास्तु एवं मुर्तीकला का वर्णन उपलब्ध होता है। उदाहरण के स्वरूप में कामिका आगम में कुल 75 पचहत्तर अध्याय है जिसमें 13 अध्ययायों को छोड़ दे तो लगभग 62 अध्यायों में वास्तुकला एवं मुर्तीकला का उल्लेख प्राप्त होता है। इसी प्रकार से करूणागम, सुप्रभेदागम, अंशुमान आगम में भी वास्तु एवं मूर्तिकला तथा स्थापत्यकला के विषय में उल्लेख प्राप्त होता है।

4.5 शब्दावली

भुगु	–	भार्गव ऋषि
अत्रि	–	ऋषि
वसिष्ठ	–	ऋषि एवं भगवान राम के गुरू
विश्वकर्मा	–	वास्तुशास्त्र के महान आचार्य एवं देववास्तुविद्
मय	–	रावण के श्वसुर तथा वास्तुशास्त्रोपदेष्टा
नारद	–	नारद एक प्रसिद्ध ऋषि वास्तुविद्
नग्नजित	–	वास्तुविज्ञानी
पुरन्दर	–	वास्तुविद
ब्रह्मा	–	वास्तु के महान आचार्य
वासुदेव	–	वास्तु विशेषज्ञ
अनिरूद्ध	–	वास्तु विज्ञानी
शुक्र	–	शुक्राचार्य एवं वास्तुशास्त्री
बृहस्पति	–	देवगुरू एवं नवग्रहों में प्रधान ग्रह तथा वास्तुशास्त्री
प्रोक्तम्	–	कहा गया है।
वास्तुशास्त्रम्	–	शास्तुशास्त्र को

गर्गायधीमते	–	गर्गादि द्वारा अपनी मति के अनुसार
गर्गात्पराशरः	–	गर्ग से पराशर
प्राप्तस्तस्मात्प्राप्तो	–	प्राप्त करने पर उनसे प्राप्त करना
वृहद्रथः	–	वृहदरथ
वृहद्रथाद्विश्वकर्मा	–	वृहद्रथ से विश्वकर्मा
वास्तुशास्त्रकम्	–	वास्तुशास्त्र को
जगतो	–	जगत के लिए
हितायकथयत्पुनः	–	कल्याण के लिए कहा।

4.6 बोधप्रश्न / अभ्यास प्रश्न

1. तन्त्रशास्त्र एवं आगमशास्त्र में वास्तु के विषय में वर्णित विषय पर विस्तृत उल्लेख करें।
2. प्राचीन भारतीय संस्कृति में वास्तु की महन्ता के विषय में स्पष्ट करें।
3. वास्तुशास्त्र के प्रधान आचार्य कौन–कौन है स्पष्ट करते हुए विस्तार से चर्चा करें।
4. कामिका आगम में उल्लिखित वास्तुशास्त्र विषयक पर विस्तार से उल्लेख करें।
5. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आगमोक्त वास्तुशास्त्र पर प्रकाश डालें।
6. वर्तमान सन्दर्भ में वास्तुशास्त्र की उपयोगिता सिद्ध करें।
7. ज्योतिष एवं वास्तुशास्त्र में पारम्परिक सम्बन्ध के विषय में उल्लेख करें।

4.7 सहायक उपयोगी पुस्तकें

1. वृहद्वास्तुमाला– चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन के 37/177 गोपाल मन्दिर लेन
2. समराङ्गण सूत्रधार– चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन के0 37/117 गोपालमन्दिर लेन
3. भारतीय वास्तुविद्या के वैज्ञानिक आधार मान्यता प्रकाशन 60–C मायाकुंज मायाः दिल्ली
4- ऋग्वेद 4-30-20, 7-5-3, 2-41-5, 7-3-7, 3-43-6,
5. मत्स्यपुराण गीताप्रेस गोरखपुर उत्तर प्रदेश।
6. अथर्ववेद गीताप्रेस गोरखपुर उत्तर प्रदेश।
7. शतपथ ब्राह्मंण राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान नई दिल्ली।
8. राजवल्लभ मण्डन– चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
9. ज्योतिर्निबिन्ध चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
10. मुहुर्त चिन्तामणी– चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
11. कल्पद्रुम भूमि लक्षणाध्याय चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।